वैदिक संस्कृति : पुस्तकीय समीक्षा

डॉ0 पंकज कुमार*

समीक्षकीय पुस्तक : वैदिक संस्कृति डॉ0 किरण कुमार थपलियाल की एक महत्वपूर्ण रचना है। 48 पृष्ठों की यह पुस्तक डॉ0 थपलियाल ने अपने सहरचनाकार प्रशांत श्रीवास्तव के साथ रचा, जिसका प्रकाशन अभिव्यक्ति प्रकाशन, इलाहाबाद के द्वारा 1996 ई0 में प्रथम संस्करण 15 रु0 मूल्य के साथ प्रकाशित हुई है।

प्रस्तुत पुस्तक 6 अध्याय में परिशिष्ट के 2 अध्यायों सहित अंत में 2 पृष्ठों की सक्षिप्त ग्रंथ सूची के साथ प्रकाशित की गई है।

प्रस्तुत पुस्तक अपने आमुख पृष्ठ जिसपर नृत्यरत विष्णु है, वही से पाठकों को अपनी ओर विशेष रुप से आकर्षित करती है। ऋग्वेद की ऋचा की संस्तुति के साथ प्रारंभ की गई है। यह समाचिन भी है क्योंकि पुस्तक अपने शीर्षक में भी वैदिक संस्कृति है।

विवेच्य पुस्तक की प्रथम अध्याय वैदिक साहित्य है जिसमें रचनाकार ने वैदिक साहित्य के विभिन्न उपागमों पर पाठकों का ध्यान आकर्षित करते हुए संबंधित विभिन्न साहित्यों का साक्षात्कार करवाया है। विवेच्य अध्याय में 1500 ई0पू0 से 600 ई0पू0 के बीच वैदिक एवं लौकिक संस्कृत में रचित साहित्यों एवं उसपर परवर्ती टीकाओं यथा ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, ब्राह्मण, आरण्यक एवं उपनिषद् साहित्यों के साथ कई टीकाओं का जिक्र किया है। शोध–शाधन की दृष्टि से विवेच्य अध्याय से अपने संक्षिप्त स्वरुप की पुस्तक के साथ न्याय करती है।

पुस्तक के दूसरे अध्याय को रचनाकार ने वैदिक भूगोल के रुप में उद्घटित किया है। प्रस्तुत अध्याय में आर्यो का प्रारंभ से उत्तर वैदिक काल तक भारतीय परिप्रेक्ष्य को केन्द्र में रखकर आर्यकरण की दशा एवं दिशा को प्रकाश में लाते हुए प्रस्तक में तात्कालिन प्राचीन भूगोल पर दृष्टिपात किया गया है। इसमें नदियाँ, पर्वत, समुद्र, कृष्य एवं अकृष्य भूमि, जन, जनपद, वन्यक्षेत्र आदि के भौगोलिक स्वरुपों को दर्शाते हुए यह दिखाने की कोशिश की गई है कि भारतीय क्षेत्र के किन–किन परिक्षेत्रों तक आर्यकरण हो चुका है।

विवेच्य पुस्तक का तृतीय अध्याय समाजिक जीवन है, प्रस्तुत अध्याय में समाज में प्रचालित रीति–रिवाजों, आदत–मूल्य आदि को दर्शाया गया हैं खासकर, वैदिक साहित्य के आधार पर तथा–कथित काल को दो भागों में बाँटकर दोनों के

***(NET)**

बीच सांस्कृतिक समन्वय, सांस्कृतिक विभेदिकरण एवं नवीन बदलाव को रेंखांकित करने की कोशिश की गई है इसमें दो पक्षों में प्रथम ऋग्वैदिक काल एवं द्वितीय उत्तरवैदिक काल है। ऋग्वैदिक सुक्तों में जो समाज के उपागम विद्यमान है यथा–विवाह, शिक्षा, पारिवारिक जीवन, खान–पान विभिन्न रीति–रिवाजों, श्रृंगार, वेश–भूषा आदि को दर्शाते हुए इसकी निरंतरता या सीमित बदलाव को उत्तर वैदिक काल में भी दर्शाने की कोशिश की गई है। विवेच्य अध्याय के अध्ययन से ऐसा प्रतीत होता है कि लेखक को युगीन प्रवृति के अनुसार सामाजिक बदलाव को रेखांकित करने की कोशिश में विशेष रुचि है जिसकी परिछाप अध्याय में दृष्टिगोचर होती है।

विवेच्य पुस्तक का चतुर्थ अध्याय आर्थिक जीवन है, इसमें तथा कथित समाज में प्रचलित आर्थिक गतिविधियों यथा कृषि, पशुपालन, कुटीर–उद्योगों, स्थानीय व्यापार आदि को दर्शाया गया हैं। अध्ययन से स्पष्ट लगता है कि आर्थिक व्यवस्था के साधनों में पशुपालन, कृषि एवं कुटीर–उद्योगों की अपनी महत्ता थी जिसमें प्रश्रय पशुपालन को दिया जाता था।

पुस्तक का पंचम अध्याय वैदिक राजतंत्र है, इसमें सभा–समिति, विद्थ, गोप्ता, रत्नीन आदि के कार्यों एवं तत्कालिन युग में जन एवं जनपदों के सैनिकी एवं अस्तित्व रक्षा के लिए परस्पर युद्धों आदि राजनीतिक एवं सामरिक पक्षों को अध्याय में स्थान दिया गया है जो विशेष उल्लेखनीय है।

समीक्षकीय पुस्तक को लेखक ने षष्ठम अध्याय के रुप में वैदिक धर्म और दर्शन से अभिभूत किया है। वास्तव में, यह अध्याय पुस्तक का प्राण है। इसमें वैदिक साहित्य धर्म के आवरण से ओत–प्रोत है। अतः उपलब्ध साक्ष्य की सीमित ही सही किंतु वैज्ञानिक व्याख्या करने की कोशिश की गई है। खासकर, देवी–देवताओं का वर्गीकरण ध्यू स्थानिय, अंतरिक्ष स्थानिय, पृथ्वी स्थानिय के रुप वर्गीकरण देवताओं का मानवीकरण तथा एकेश्वरवाद की धारणाओं के साथ सर्व देवतावाद और बहु–देवतावाद तीनों ही प्रलक्षित होती हैं और इसी वर्गीकरण के संदर्भ में ध ार्मिक व्यवस्था की अन्य चीजें चाहे वह स्तुती पाठ हो, चाहे यज्ञ हो, या उपनिषदीक विचार धारा में ज्ञानवाद का पक्ष, सभी का सम्मिश्रण अध्याय को एक अलौलिक आभा देती है।

पुस्तक के अंत में परिशिष्ट है एवं संक्षिप्त संदर्भ ग्रंथ दी गई है।

समग्र कहा जा सकता है कि निःसंदेह रचना में परिपक्वता झलकती है, परंतु पृष्ठों का अभाव और अतिसंक्षिप्तीकरण पाठकों को बांधने में सक्षम नही हैं परंतु इन कमियों के वाबजूद भी यह पुस्तक रूचिकर है।

****